[2014) 4 एस.सी.आर. 541

महानिबंधक के माध्यम से

पटना उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार,

बनाम

श्याम देव सिंह एवं अन्य

(2002 का दीवानी अपील संख्या 2529)

28 मार्च, 2014

[पी. सदाशिवम, मुख्य न्यायाधीश, रंजन गोगोई और एन.वी. रमणा, न्यायमूर्तिगण]

सेवा कानून - न्यायिक सेवा - 58 वर्ष की आयु के बाद सेवा विस्तार की निरंतरता का अधिकार- निर्धारण की विधि - बिहार उच्च न्यायिक सेवा- उत्तरदाता- न्यायिक अधिकारी को 58 वर्ष की आयु के बाद सेवा विस्तार से इनकार - यदि उचित हो - अभिनिर्धारित: 58 वर्ष की आयु के बाद सेवा विस्तार का अधिकार 58 वर्ष की आयु के बाद किसी न्यायिक अधिकारी का सेवा विस्तार विचाराधीन विशेष अधिकारी के सेवा अभिलेख के आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए, न कि अन्य अधिकारियों के अभिलेख के साथ तुलनात्मक मूल्यांकन के आधार पर - भले ही किसी अन्य अधिकारी की वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन (एसीआर) उत्तरदाता की तुलना में निश्चित रूप से निम्नतर हो, फिर भी, उसका ऐसे अधिकारी को विस्तार प्रदान करने से कोई लेना-देना हो सकता है बिना उत्तरदाता को समान विस्तार का कोई अधिकार या हक प्रदान किए - वर्तमान वाद में, यद्यपि उत्तरदाता के विरुद्ध दिनांक 15.12.1995 को प्रतिकूल टिप्पणियाँ/टिप्पणियाँ थीं, लेकिन उन पर कार्रवाई नहीं की गई और इसके अलावा, उत्तरदाता की बाद की वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन पर्याप्त रूप से सकारात्मक थीं और उन्हें एक कुशल न्यायिक

अधिकारी के रूप में दर्शाती थीं, जिनकी ईमानदारी और निष्पक्षता के लिए अच्छी प्रतिष्ठा थी - साथ ही, उत्तरदाता को जिला न्यायपालिका में उच्चतम स्तर पर पदोन्नति के साथ-साथ उक्त संवर्ग में चयन ग्रेड भी प्रदान किया गया था - उक्त पदोन्नतियों के प्रभाव से दिनांक 15.12.1995 की प्रतिकूल टिप्पणी को मिट गई -इसलिए, प्रशासनिक पक्ष से, उच्च न्यायालय द्वारा उत्तरदाता को 58 वर्ष की आयु के बाद सेवा में जारी रखने से इनकार करना उचित नहीं था - हालाँकि, इस बीच लगभग 14 वर्ष की अवधि बीत चुकी है और उच्च न्यायालय से इस विलम्बित चरण में यह प्रक्रिया दोबारा करने का अनुरोध करना अत्यधिक अनुचित होगा - इसके अलावा, ऐसी कार्रवाई अनावश्यक भी होगी - उत्तरदाता को 60 वर्ष की आयु पूरी होने पर सेवा से सेवानिवृत्त माना जाए और उस आधार पर वेतन और पेंशन सहित सभी परिणामी लाभ उसे तुरंत और बिना किसी देरी के उपलब्ध कराए जाने का निर्देश दिया जाए।

सेवा कानून - न्यायिक सेवा - 58 वर्ष की आयु के बाद न्यायिक अधिकारी की निरंतर उपयोगी सेवा की संभावना - मूल्यांकन और आकलन - न्यायिक समीक्षा - दायरा - अभिनिर्धारितः किसी न्यायिक अधिकारी की निरंतर उपयोगी सेवा की संभावना के बारे में राय बनाने के उद्देश्य से उसके सेवा अभिलेख का मूल्यांकन उच्च न्यायालय द्वारा किया जाना आवश्यक है, जिसका अर्थ प्रशासनिक पक्ष का पूर्ण न्यायालय है। अंतिम निर्णय हमेशा उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा वाद पर विस्तृत विचार-विमर्श से पहले लिया जाता है, जो विचाराधीन न्यायिक अधिकारी के गुणों और विशेषताओं से परिचित होते हैं। जिस प्रक्रिया से अंततः निर्णय लिया जाता है, उसे सीमित न्यायिक समीक्षा की अनुमति होनी चाहिए। - केवल दुर्लभ वादों में ही न्यायिक समीक्षा की अनुमति होगी, जहाँ लिया गया निर्णय किसी भी आलेख द्वारा समर्थित नहीं हो या वह किसी ऐसे निष्कर्ष को दर्शाता हो, जिसे प्रथम दृष्टया कायम नहीं रखा जा सकता।

पटना उच्च न्यायालय के महानिबंधक द्वारा जारी एक पत्र द्वारा उत्तरदाता को सूचित किया गया कि वह 58 वर्ष की आयु पूरी होने पर सेवा से सेवानिवृत्त हो जाएगा। महानिबंधक का उक्त पत्र, अन्य बातों के साथ-साथ, पूर्ण न्यायालय की बैठक में लिए गए प्रशासनिक पक्ष के उच्च न्यायालय के एक निर्णय पर आधारित था, जिसमें मूल्यांकन समिति द्वारा उत्तरदाता की सेवा को 58 वर्ष की आयु से आगे न बढ़ाने के निर्णय को अनुमोदित किया गया था। उपरोक्त सभी निर्णयों को, जिन्हें चुनौती दी गई थी, उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 20-2-2001 के आक्षेपित आदेश द्वारा अपास्त कर दिया गया था। और वाद पर पुनर्विचार करने का निर्देश दिया गया था।

मुख्यतः दो कारणों से उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा। पहला कारण यह था कि उत्तरदाता की दिनांक 15.12.1995 की वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन (एसीआर) में दर्ज नकारात्मक टिप्पणियाँ/प्रतिकूल टिप्पणियाँ उत्तरदाता को नहीं बताई गईं और उच्च न्यायालय की स्थायी समिति ने 03.01.1997 को वाद को आगे न बढ़ाने का निर्णय लिया। उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि उक्त टिप्पणियों के बावजूद, उत्तरदाता को बाद में जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर पदोन्नत किया गया और चयन ग्रेड भी प्रदान किया गया, जिसका प्रभाव उच्च न्यायालय के अनुसार 15.12.1995 की प्रतिकूल टिप्पणियों को निरस्त करने के रूप में हुआ। उच्च न्यायालय ने, आलोचना आदेश में, इस तथ्य पर भी ध्यान दिया कि उत्तरदाता की बाद के वर्षों की वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन यह दर्शाती हैं कि उत्तरदाता, कुल मिलाकर, एक अच्छा अधिकारी है और उसकी ईमानदारी और प्रतिष्ठा पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है। उच्च न्यायालय जिस अन्य कारण से इस निष्कर्ष पर पहुँचा, वह यह था कि उत्तरदाता को सेवा विस्तार देने से इनकार कर दिया गया था, जबकि एक 'यू', जिसकी वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन उत्तरदाता की तुलना में निश्चित रूप से कमतर थीं, को 58 वर्षों के बाद सेवा में बनाए रखने की अनुमति दी गई थी।

अपील को खारिज करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया कि: 1.1. 58 वर्ष की आयु के बाद किसी न्यायिक अधिकारी की सेवा जारी रखने/विस्तार का अधिकार विचाराधीन विशेष अधिकारी के सेवा अभिलेख के आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए, न कि अन्य अधिकारियों के अभिलेख के साथ तुलनात्मक मूल्यांकन के आधार पर। इसलिए, भले ही 'यू' की वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन उत्तरदाता की तुलना में निश्चित रूप से निम्नतर हो, फिर भी, वह, सर्वोत्तम रूप से, उपरोक्त अधिकारी को सेवा विस्तार प्रदान करने के लिए प्रासंगिक हो सकती है, उत्तरदाता को समान सेवा विस्तार का कोई अधिकार या हक प्रदान किए बिना। [कंडिका 4) [547-एफ-एच]

1.2. किसी न्यायिक अधिकारी की निरंतर उपयोगी सेवा की क्षमता के बारे में राय बनाने के उद्देश्य से उसके सेवा अभिलेख का मूल्यांकन उच्च न्यायालय द्वारा किया जाना आवश्यक है, जिसका स्पष्ट अर्थ प्रशासनिक पक्ष के पूर्ण न्यायालय से है। सभी उच्च न्यायालयों में, ऐसा मूल्यांकन, सबसे पहले, वरिष्ठ न्यायाधीशों की एक समिति द्वारा किया जाता है। समिति का निर्णय पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखा जाता है ताकि यह तय किया जा सके कि समिति की सिफारिश को स्वीकार किया जाना चाहिए या नहीं। अंतिम निर्णय से पहले हमेशा उच्च न्यायालय के माननीय न्यायमूर्ति गण द्वारा वाद पर विस्तृत विचार-विमर्श किया जाता है, जो विचाराधीन न्यायिक अधिकारी के गुणों और विशेषताओं से परिचित होते हैं। जिस प्रक्रिया से अंततः निर्णय लिया जाता है, उसे सीमित न्यायिक समीक्षा की अनुमति होनी चाहिए और केवल दुर्लभ वादों में ही न्यायिक समीक्षा की अनुमति होगी, जहाँ लिया गया निर्णय किसी भी आलेख द्वारा समर्थित नहीं है या वह किसी ऐसे निष्कर्ष को दर्शाता है जिसे प्रथम दृष्टया संधारित नहीं रखा जा सकता। [कंडिका 8] [550·डी·एच]

1.3. वर्तमान वाद में, दिनांक 15.12.1995 की प्रतिकूल टिप्पणियाँ/टिप्पणियाँ उत्तरदाता को संप्रेषित नहीं की गई थीं। अभिलेख पर उपलब्ध आलेखों से यह भी स्पष्ट है कि उच्च

न्यायालय की स्थायी समिति ने दिनांक 3.1.1997 को आयोजित अपनी बैठक में वाद को आगे बढ़ाने के बजाय बंद करने का निर्णय लिया था। उत्तरदाता की वर्ष 1997-1998 और 2000-2001 की वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन पर्याप्त रूप से सकारात्मक हैं और उत्तरदाता को एक कुशल न्यायिक अधिकारी के रूप में दर्शाती हैं, जिसकी ईमानदारी और निष्पक्षता के लिए अच्छी प्रतिष्ठा है। उत्तरदाता को दिनांक 5.9.1998 को जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर पदोन्नत किया गया था। दिनांक 17.2.2000 की अधिसूचना द्वारा उन्हें दिनांक 1.1.1997 से बिहार उच्चतर न्यायिक सेवा के चयन ग्रेड में पदोन्नत किया गया था। इसलिए, न केवल दिनांक 15.12.1995 की प्रतिकूल टिप्पणी पर कार्रवाई नहीं की गई, बल्कि उसके बाद जिला न्यायपालिका में उच्चतम स्तर पर पदोन्नति के साथ-साथ उक्त संवर्ग में चयन ग्रेड भी उत्तरदाता को प्रदान किया गया। अतः उक्त पदोन्नति (पदोन्नतियों) का प्रभाव 15.12.1995 की प्रतिकूल टिप्पणी को निरस्त करने जैसा होगा। तथ्यों के आलोक में, प्रशासनिक पक्ष से उच्च न्यायालय का उत्तरदाता को 58 वर्ष की आयु के बाद सेवा में बनाए रखने से इनकार करना उचित नहीं था। अतः उक्त निर्णय को अपास्त करने वाले उच्च न्यायालय द्वारा पारित 20.2.2001 के आदेश की पुष्टि की जानी चाहिए। [कंडिका 9] [551- जी-एच; 552-एच-एफ]

बिश्वनाथ प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य **(2001) 2 एससीसी 305: 2000 (5) अनुपूरक एससीआर 718;** *सैयद टी.ए. नक्शबंदी बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य* **(2003) 9 एससीसी 592: 2003 (1) अनुपूरक एससीआर 114 और** *बृज मोहन सिंह चोपड़ा बनाम पंजाब राज्य* **एआईआर 1987 एससी 948: 1987 (2) एससीआर 583 - अवलंवित।**

अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य **(1993) 4 एससीसी 288: 1993 (1) अनुपूरक एससीआर 749 - संदर्भित।**

2. हालाँकि, इस बीच लगभग 14 वर्ष बीत चुके हैं। उच्च न्यायालय से इस विलम्बित चरण में यह प्रक्रिया पुनः करने का अनुरोध करना अत्यंत अनुचित होगा। इसके अतिरिक्त, ऐसी कार्रवाई अनावश्यक भी होगी। यह आदेश देना उचित समझा जाता है कि उत्तरदाता को 60 वर्ष की आयु पूरी होने पर सेवानिवृत्त माना जाए और उस आधार पर वेतन और पेंशन सहित सभी परिणामी लाभ उसे तत्काल और बिना किसी देरी के उपलब्ध कराए जाएँ। [कंडिका 10] [552-जी-एच; 553-ए-बी]।

नज़ीर सन्दर्भ:

2000 (5) अनुपूरक	**एससीआर 718**	**अवलंबित**	**कंडिका 6**
1993 (1) अनुपूरक	**एससीआर 749**	**संदर्भित**	**कंडिका 6**
2003 (1) अनुपूरक	**एससीआर 114**	**अवलंबित**	**कंडिका 8**
1987 (2) एससीआर 583		**अवलंबित**	**कंडिका 9**

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2002 का दीवानी अपील संख्या 2529.

2000 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 6459 में पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 20.02.2001 के निर्णय एवं आदेश से।

उपस्थित पक्षों की ओर से पी.एच. पारेख, राजीव कुमार बंसल, कामाक्षी एस. मेहलवाल, रितिका सेठी, विशाल प्रसाद, हिमांजलि गौतम, अंभोज कुमार सिन्हा, गोपाल सिंह, मनीष कुमार चंदन कुमार।

न्यायालय का निर्णय

रंजन गोगोई, न्यायमूर्ति द्वारा सुनाया गया। 1. पटना उच्च न्यायालय के महानिबंधक द्वारा दिनांक 17.5.2000 को जारी एक पत्र द्वारा उत्तरदाता को सूचित किया गया था कि वह 58

वर्ष की आयु पूरी करने पर सेवा से सेवानिवृत्त हो जाएगा। महानिबंधक का उक्त पत्र, अन्य बातों के साथ-साथ, दिनांक 6.5.2000 को आयोजित पूर्ण न्यायालय की बैठक में प्रशासनिक पक्ष पर उच्च न्यायालय के एक निर्णय पर आधारित था, जिसमें मूल्यांकन समिति द्वारा दिनांक 2.5.2000 को उत्तरदाता की सेवा 58 वर्ष की आयु से आगे न बढ़ाने के निर्णय को अनुमोदित किया गया था। उपरोक्त सभी निर्णयों को चुनौती दी गई थी, जिन्हें उच्च न्यायालय ने दिनांक 20.2.2001 के अपने आदेश द्वारा अपास्त कर दिया था और वाद पर पुनर्विचार करने का निर्देश दिया था। व्यथित होकर, उच्च न्यायालय हमारे समक्ष अपील में है।

2. चुनौती दिए गए आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि मुख्य रूप से दो कारणों से उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँच पाया।

पहला यह है कि उत्तरदाता की दिनांक 15.12.1995 को वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन (एसीआर) में दर्ज नकारात्मक टिप्पणियों/प्रतिकूल टिप्पणियों की जानकारी उत्तरदाता को नहीं दी गई और उक्त टिप्पणियों के मूल तथ्य पूरी तरह से निराधार हैं। उच्च न्यायालय ने यह भी पाया कि उच्च न्यायालय की स्थायी समिति ने दिनांक 03.01.1997 को वाद को आगे न बढ़ाने और उसे बंद मानने का निर्णय लिया था। उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि उक्त टिप्पणियों के बावजूद उत्तरदाता को बाद में जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर पदोन्नत किया गया और उसे चयन ग्रेड भी प्रदान किया गया। उच्च न्यायालय के अनुसार, उपरोक्त तथ्यों का प्रभाव दिनांक 15.12.1995 की प्रतिकूल टिप्पणियों को मिटाने का था। उच्च न्यायालय ने, आक्षेपित आदेश में, इस तथ्य पर भी ध्यान दिया कि उत्तरदाता की आगामी वर्षों की वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदनों से पता चलता है कि उत्तरदाता, कुल मिलाकर, एक अच्छा अधिकारी है और उसकी ईमानदारी और प्रतिष्ठा पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है।

दूसरा कारण जिसके लिए उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा था, वह यह है कि उत्तरदाता को सेवा विस्तार देने से इनकार कर दिया गया था, जबकि श्री उदय कांत ठाकुर, जिनकी वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन (एसीआर) उत्तरदाता की तुलना में निश्चित रूप से कमतर थी, को 58 वर्षों के बाद सेवा में बनाए रखने की अनुमति दी गई थी। उपरोक्त दोहरे आधार पर ही उच्च न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला था कि उत्तरदाता को सेवा विस्तार देने से इनकार करने के कारण संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत न्यायिक समीक्षा की शक्ति के प्रयोग में हस्तक्षेप आवश्यक हो गया था।

3. हमने अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी.एच. पारेख और उत्तरदाता संख्या 1 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अम्भोज कुमार सिन्हा को सुना है।

4. प्रथम दृष्टया, उच्च न्यायालय द्वारा प्रशासनिक पक्ष में पारित आदेशों को अपास्त करने के लिए दूसरे आधार पर विचार करना सुविधाजनक है। इस वाद पर विचार करने के बाद, हमें नहीं लगता कि हमारे लिए उक्त प्रश्न पर विचार करना आवश्यक है क्योंकि 58 वर्ष की आयु के बाद किसी न्यायिक अधिकारी की सेवा जारी रखने/विस्तार का अधिकार विचाराधीन अधिकारी के सेवा अभिलेख के आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए, न कि अन्य अधिकारियों के अभिलेख के साथ तुलनात्मक मूल्यांकन के आधार पर। इसलिए, भले ही हम यह मान लें कि श्री उदय कांत ठाकुर की वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन उत्तरदाता की तुलना में निश्चित रूप से निम्नतर थीं, फिर भी, यह, सर्वोत्तम रूप से, उक्त अधिकारी को सेवा विस्तार प्रदान करने के लिए प्रासंगिक हो सकती है, उत्तरदाता को समान विस्तार के लिए कोई अधिकार या हक प्रदान किए बिना। इसलिए, यह पहला आधार है जिस पर उच्च न्यायालय ने उत्तरदाता को अनुतोष देने के लिए विचार किया था जिसकी हमें वास्तव में जांच करने की आवश्यकता है।

5. दिनांक 15.12.1995 की प्रतिकूल टिप्पणियों को ध्यान का केंद्र मानते हुए, उन्हें नीचे सुविधाजनक रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है:

> "हाल ही में मैंने श्री एस.डी. सिंह, अपर सत्र न्यायाधीश, धनबाद की ईमानदारी के बारे में काफी परेशान करने वाली खबरें सुनी हैं। मैंने वहाँ के जिला न्यायाधीश से बात की और उन्होंने भी श्री सिंह के न्यायिक अधिकारी के रूप में अपने कर्तव्यों के निर्वहन के बारे में असंतोष व्यक्त किया। हाल ही में, मैंने सीबीआई द्वारा दर्ज एक आपराधिक वाद के बारे में सुना (जिसमें श्री मोदी और श्री गांधी आरोपी हैं) जिसमें श्री सिंह का आचरण निंदनीय है।"

6. बिश्वनाथ प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य[1] में जो संयोगवश वर्तमान वाद की तरह पूर्ण न्यायालय के उसी संकल्प से उत्पन्न हुआ है, इस न्यायालय को यह विचार करने का अवसर मिला कि क्या 58 वर्ष से अधिक सेवा में बने रहना एक अधिकार है या एक प्रदत्त लाभ है और साथ ही उन मानदंडों पर भी विचार करना चाहिए जो ऐसी सेवा जारी रखने की अनुमति देने या अस्वीकार करने के निर्णय को नियंत्रित करते हैं। इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त विचार अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य[2] में दिए गए निर्देशों से उत्पन्न विभिन्न व्याख्याओं के कारण आवश्यक हो गया था। विश्वनाथ प्रसाद सिंह (उपरोक्त) वाद में प्रतिवेदन के कंडिका 18 में इस न्यायालय के निष्कर्षों का सारांश इस प्रकार दिया गया है:

"1. अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ बनाम भारत संघ वाद में न्यायिक अधिकारियों की सेवानिवृत्ति आयु बढ़ाने के संबंध में दिए गए निर्देश से सेवानिवृत्ति आयु स्वतः नहीं बढ़ जाती।

---

1 (2001) 2 एससीसी 305

2 (1993) 2 एससीसी 288

इस निर्णय के आधार पर किसी न्यायिक अधिकारी को 60 वर्ष की विस्तारित आयु तक सेवा में बने रहने का अधिकार प्राप्त नहीं होता। यह न्यायिक अधिकारियों को दिया जाने वाला एक लाभ मात्र है, जो 58 वर्ष की आयु प्राप्त करने से पहले संबंधित उच्च न्यायालयों द्वारा न्यायिक प्रणाली में उनकी निरंतर उपयोगिता के मूल्यांकन और उनकी निरंतर उपयोगी सेवा की क्षमता के बारे में राय बनाने के अधीन है। अन्यथा न्यायिक अधिकारी न्यायिक अधिकारियों की सेवा शर्तों को नियंत्रित करने वाले सेवा नियमों में नियुक्त सेवानिवृत्ति आयु पर सेवानिवृत्त हो जाते हैं।

2. 1993 के वाद में दिया गया निर्देश एक तदर्थ व्यवस्था के रूप में है ताकि यह निर्णय की तिथि से लेकर राज्य सरकार द्वारा सेवा नियमों में उचित संशोधन किए जाने तक लागू रहे। एक बार जब सेवानिवृत्ति आयु को नियंत्रित करने वाले सेवा नियमों में संशोधन हो जाता है, तो यह निर्देश लागू नहीं होता।

3. उच्च न्यायालय, सेवानिवृत्ति की सामान्य आयु से पहले या बाद में, किसी न्यायिक अधिकारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त कर सकता है, बशर्ते कि उसकी राय हो कि जनहित में अनिवार्य सेवानिवृत्ति आवश्यक है। अनिवार्य सेवानिवृत्ति का निर्णय प्रासंगिक सेवा नियमों के अनुसार होना चाहिए, जो 1993 के वाद के अनुसार न्यायिक अधिकारी के मूल्यांकन की प्रक्रिया से स्वतंत्र हो। अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सिफारिश राज्य सरकार को भेजी जानी चाहिए, जो आवश्यक आदेश पारित करेगी और लागू करेगी।

4. यदि उच्च न्यायालय किसी न्यायिक अधिकारी को सेवानिवृत्ति आयु में विस्तार के लाभ का हकदार नहीं पाता है, तो वह सेवा नियमों द्वारा निर्धारित सेवानिवृत्ति आयु पर सेवानिवृत्त हो जाएगा। इस संबंध में उच्च न्यायालय या राज्य के राज्यपाल द्वारा कोई विशिष्ट आदेश या सूचना जारी करने की आवश्यकता नहीं है। ऐसी सेवानिवृत्ति अनुशासनात्मक कार्यवाही में दंड के

रूप में या यहाँ तक कि "जनहित में अनिवार्य सेवानिवृत्ति" के रूप में होने के अर्थ में "अनिवार्य सेवानिवृत्ति" नहीं है। न्यायिक अधिकारी का कोई अधिकार नहीं छीना जाता है। जहाँ उच्च न्यायालय इस संबंध में कोई सूचना देना चाहे, वहाँ उसे "अनिवार्य सेवानिवृत्ति" शब्द का प्रयोग न करने की सलाह दी जाती है। इससे भ्रम की स्थिति पैदा होती है। यदि ऐसा है भी, तो यह बताना पर्याप्त होगा कि संबंधित अधिकारी, लाभ या सेवानिवृत्ति की विस्तारित आयु दिए जाने के लिए उपयुक्त नहीं पाए जाने के कारण, सामान्य आयु या सेवानिवृत्ति तिथि पर सेवानिवृत्त हो जाएगा।

7. *विश्वनाथ प्रसाद सिंह (उपरोक्त)* में दिए गए उपरोक्त प्रस्तावों के आलोक में, उत्तरदाता के दावे के अनुसार उसकी पात्रता और प्रशासनिक पक्ष पर उच्च न्यायालय के निर्णय की, विशेष रूप से न्यायिक समीक्षा की शक्ति की सीमा के संदर्भ में, जांच की जानी चाहिए जो उच्च न्यायालय द्वारा किए गए आक्षेपित इनकार की जांच करने के लिए उपलब्ध होगी।

8. इस मुद्दे के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। किसी न्यायिक अधिकारी के सेवा अभिलेख का मूल्यांकन, उसकी निरंतर उपयोगी सेवा की क्षमता के बारे में राय बनाने के उद्देश्य से, उच्च न्यायालय द्वारा किया जाना आवश्यक है, जिसका स्पष्ट अर्थ प्रशासनिक पक्ष का पूर्ण न्यायालय है। सभी उच्च न्यायालयों में, ऐसा मूल्यांकन, प्रथमतः, वरिष्ठ न्यायाधीशों की एक समिति द्वारा किया जाता है। समिति का निर्णय पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखा जाता है ताकि यह तय किया जा सके कि समिति की सिफारिश को स्वीकार किया जाना चाहिए या नहीं। अंतिम निर्णय से पहले हमेशा उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा वाद पर विस्तृत विचार किया जाता है, जो विचाराधीन न्यायिक अधिकारी के गुणों और विशेषताओं से परिचित होते हैं। वर्तमान वाद में भी यही हुआ था। हमारे विचार में, जिस प्रक्रिया से अंततः निर्णय लिया जाता है, उसे सीमित न्यायिक समीक्षा की अनुमति होनी चाहिए और यह केवल दुर्लभ वादों में

ही संभव है जब लिया गया निर्णय किसी भी आलेख द्वारा समर्थित न हो या वह किसी ऐसे निष्कर्ष को दर्शाता हो जिसे प्रथम दृष्टया, कायम नहीं रखा जा सकता, तभी न्यायिक समीक्षा की अनुमति होगी। इस न्यायालय द्वारा सैयद टी.ए. नक्शबंदी बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य[3] वाद में अनुमेय न्यायिक समीक्षा की सीमा की गणना की गई है। प्रतिवेदन के कंडिका 10, जो उपरोक्त स्थिति पर प्रकाश डालता है, पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए:-

> "न तो उच्च न्यायालय और न ही यह न्यायालय, अपनी न्यायिक समीक्षा की शक्तियों का प्रयोग करते हुए, संबंधित उच्च न्यायालय की समिति/पूर्ण न्यायालय के स्थान पर स्वयं को प्रतिस्थापित कर सकता है या करेगा, ताकि स्वतंत्र रूप से पुनर्मूल्यांकन किया जा सके, मानो किसी अपील पर सुनवाई हो रही हो। दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा हमारे ध्यान में लाई गई संपूर्ण आलेख पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद, हम इस बात से संतुष्ट हैं कि समिति/पूर्ण न्यायालय द्वारा अपनी सर्वसम्मत राय बनाते हुए किया गया मूल्यांकन न तो इतना मनमाना या मनमानीपूर्ण है और न ही इसे इतना अतार्किक कहा जा सकता है कि न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोर दे और किसी हस्तक्षेप को उचित या न्यायसंगत ठहराए। ऐसे आंकलन, मूल्यांकन और राय बनाने के वादों में, कई कारक एक अत्यावश्यक और महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और किसी भी एक कारक को अनुपात से अधिक बढ़ा-चढ़ाकर पेश नहीं किया जाना चाहिए ताकि हल किए जाने वाले किसी मुद्दे या विचार किए जाने वाले या प्रस्तुत किए जाने वाले दावों की निंदा या निंदा की जा सके। चीज़ों की प्रकृति को देखते हुए, पूर्ण

---

3 (2003) 9 एससीसी 592

न्यायालय द्वारा किए गए ऐसे अभ्यास को न्यायिक समीक्षा के अधीन करना लगभग असंभव होगा, सिवाय किसी असाधारण वाद के जब न्यायालय को यह विश्वास हो कि कोई भयावह घटना, जो नहीं होनी चाहिए थी, वास्तव में घटित हुई है, न कि केवल इसलिए कि कोई अन्य संभावित राय हो सकती है या किसी को समिति/पूर्ण न्यायालय द्वारा किए गए अभ्यास के बारे में कोई शिकायत है।

(हमारे द्वारा जोर दिया गया)

9. उपरोक्त के आलोक में, अब हम वर्तमान वाद के तथ्यों पर विचार कर सकते हैं।

इसमें कोई विवाद नहीं है कि दिनांक 15.12.1995 की प्रतिकूल टिप्पणियाँ/टिप्पणियाँ उत्तरदाता को संप्रेषित नहीं की गई थीं। अभिलेख पर उपलब्ध आलेख से यह भी स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय की स्थायी समिति ने 3.1.1997 को आयोजित अपनी बैठक में वाद को आगे बढ़ाने के बजाय बंद करने का निर्णय लिया था। उत्तरदाता की 1997-1998 और 2000-2001 की बाद की वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन पर्याप्त रूप से सकारात्मक हैं और उत्तरदाता को एक कुशल न्यायिक अधिकारी के रूप में दर्शाती हैं जिसकी ईमानदारी और निष्पक्षता के लिए अच्छी प्रतिष्ठा है। उत्तरदाता को 5.9.1998 को जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर पदोन्नत किया गया था। दिनांक 17.2.2000 की अधिसूचना द्वारा उन्हें 1.1.1997 से बिहार उच्चतर न्यायिक सेवा के चयन ग्रेड में पदोन्नत किया गया था। इसलिए, न केवल दिनांक 15.12.1995 की प्रतिकूल टिप्पणी पर कार्रवाई नहीं की गई, बल्कि इसके बाद जिला न्यायपालिका में उच्चतम स्तर पर पदोन्नति के साथ-साथ उक्त संवर्ग में चयन ग्रेड भी उत्तरदाता को प्रदान किया गया। जिला न्यायाधीश के उच्च पद पर पदोन्नति और चयन ग्रेड में नियुक्ति सकारात्मक योग्यता और क्षमता के मूल्यांकन पर आधारित है। इसलिए, उक्त पदोन्नति (पदोन्नतियाँ) दिनांक 15.12.1995

की प्रतिकूल टिप्पणी को अपास्त करने का प्रभाव डालेंगी। वास्तव में ऐसा ही विचार *बृज मोहन सिंह चोपड़ा बनाम पंजाब राज्य* [4](कंडिका 10) में व्यक्त किया गया है। उपरोक्त तथ्यों के आलोक में, हम यह नहीं समझ पा रहे हैं कि प्रशासनिक पक्ष से उच्च न्यायालय द्वारा उत्तरदाता को 58 वर्ष की आयु के बाद सेवा में बनाए रखने से इनकार करना कैसे उचित ठहराया जा सकता है। अत उच्च न्यायालय द्वारा उक्त निर्णय को अपास्त करते हुए पारित दिनांक 20.2.2001 के आदेश की पुष्टि की जानी चाहिए और वर्तमान अपील को खारिज किया जाना चाहिए। हम तदनुसार आदेश देते हैं।

10. वह परिणामी अनुतोष क्या होनी चाहिए जो प्रदान की जानी चाहिए? इस बीच लगभग 14 वर्ष बीत चुके हैं। उच्च न्यायालय से इस विलम्बित चरण में इस प्रक्रिया को पुनः करने का अनुरोध करना अत्यंत अनुचित होगा। इसके अलावा, ऐसी कार्रवाई भी अनावश्यक होगी, विशेष रूप से, जब उत्तरदाता का संपूर्ण सेवा अभिलेख हमारे समक्ष प्रस्तुत किया जा चुका है, जिसका विवरण उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय में भी उपलब्ध है। इस पर विचार करने के बाद, हम यह आदेश देना उचित समझते हैं कि उत्तरदाता को 60 वर्ष की आयु पूरी होने पर सेवा से सेवानिवृत्त माना जाए और उस आधार पर वेतन और पेंशन सहित सभी परिणामी लाभ उसे तत्काल और बिना किसी देरी के उपलब्ध कराए जाएं।

बी.बी.बी. अपील खारिज कर दी गयी।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।

---

4 एआईआर एससी 948